

श्रीमद्भागवत नवम स्कन्ध अध्याय 2: मनु के पुत्र

14 September 2026



पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



वर्षा से भीगी रात में हाथ में तलवार लिए राजकुमार पृषध्र अपने पिता की गौओं की रखवाली कर रहे हैं — उस अन्धकार में हुई एक भूल उनके राजसी जन्म को उलट देगी, फिर भी अन्ततः उन्हें सीधे भगवान् तक पहुँचा देगी।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

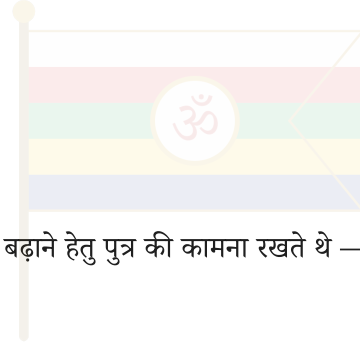
श्रीमद्भागवत विङ्गम में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पवित्र कथाओं और उपदेशों के माध्यम से एक भक्तिपूर्ण यात्रा। सुद्युम्न के अब वन में बस जाने के पश्चात्, राजा परीक्षित वैवस्वत मनु के शेष पुत्रों और उनसे उत्पन्न महान् कुलों का वृत्तान्त सुनने की ओर मुड़ते हैं — वंशों का यह अध्याय, जिसके फैलते हुए नामों के भीतर इस पूरे स्कन्ध के कुछ सर्वाधिक मार्मिक भक्तिमय जीवन छिपे हैं।

अध्याय-पारेचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 9 (नवम स्कन्ध)
- अध्याय: 2 (द्वितीय अध्याय)
- अध्याय शीर्षक: मनु के पुत्रों की सन्तति
- प्रमुख वक्ता: शुकदेव गोस्वामी, राजा परीक्षित को कथा सुनाते हुए — सम्पूर्ण प्रसंग सूत गोस्वामी द्वारा नैमिषारण्य में शौनक आदि ऋषि-समुदाय को सुनाया गया
- प्रमुख श्रोता: राजा परीक्षित
- मुख्य स्थल: गंगा तट, जहाँ शुकदेवजी परीक्षित को उपदेश देते हैं; कथा यमुना-तट पर मनु की तपस्या से लेकर उनके वंशजों के गोशालाओं, वनों और राजसभाओं तक विस्तृत है
- केन्द्रीय विषय: मनु के पुत्रों से उत्पन्न कुल — पृषध्र और कवि के भक्तिमय जीवन, तथा करुषक, धृष्ट, नरिष्यन्त एवं दिष्ट की वंश-परम्पराएँ, जिनमें सम्राट् मरुत्त और तृणबिन्दु का वंश सम्मिलित हैं
- मुख्य श्लोक-सीमा: नवम स्कन्ध, अध्याय 2, श्लोक 1-36
- मुख्य संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण

मनु की पुनः तपस्या और उनके दस पुत्र

सुद्युम्न के वन चले जाने पर, वैवस्वत मनु — जो अब भी अपने वंश को आगे बढ़ाने हेतु पुत्र की कामना रखते थे — यमुना के तट पर सौ वर्ष तक तपस्या करते रहे।



श्रीशुक उवाच

एवं गतेऽथ सुद्युम्ने मनुर्वैवस्वतः सुते ।

पुत्रकामस्तपस्तेपे यमुनायां शतं समाः ॥ १ ॥

śrī-śuka uvāca evaṁ gate 'tha sudyumne manur vaivasvataḥ sute putra-kāmas tapas tepe yamunāyāṁ śataṁ samāḥ

अर्थ: श्रीशुकदेवजी ने कहा — इस प्रकार अपने पुत्र सुद्युम्न के चले जाने पर, सन्तान की कामना रखते हुए वैवस्वत मनु ने यमुना के तट पर सौ वर्ष तक तपस्या की। (नवम स्कन्ध, अध्याय 2, श्लोक 1)

तत्पश्चात् सन्तान-प्राप्ति के निमित्त सर्वशक्तिमान् भगवान् श्रीहरि की आराधना करके मनु ने अपने समान दस पुत्र प्राप्त किए, जिनमें ज्येष्ठ इक्ष्वाकु थे — वही सूर्यवंश के मूल, जिनकी महिमा आगे के अध्यायों में भरी हुई है।

ततोऽयजन्मनुर्देवमपत्यार्थं हरिं प्रभुम् ।

इक्ष्वाकुपूर्वजान् पुत्रान्लेभे स्वसदृशान् दश ॥ २ ॥

tato 'yajan manur devam apatyārthaṁ hariṁ prabhum ikṣvāku-pūrvajān putrān lebhe va-sadṛśān daśa

अर्थ: तब मनु ने सन्तान के लिए सर्वशक्तिमान् भगवान् श्रीहरि की आराधना की और अपने समान दस पुत्र प्राप्त किए, जिनमें इक्ष्वाकु सबसे बड़े थे। (नवम स्कन्ध, अध्याय 2, श्लोक 2)

गोपालक पृषध्र

इन पुत्रों में एक थे पृषध्र, जिन्हें उनके कुल-गुरु ऋषि वसिष्ठ ने गौओं की रक्षा के कार्य में नियुक्त किया था। रात-रात भर वे सजग और निद्रारहित रहकर गौओं की रखवाली करते, वीरासन-व्रत का पालन करते हुए — अन्धकार भरे प्रहरों में हाथ में तलवार लिए खड़े होकर पहरा देते।

पृषध्रस्तु मनोः पुत्रो गोपालो गुरुणा कृतः ।

पालयामास गा यत्तो रात्र्यां वीरासनव्रतः ॥ ३ ॥

prṣadhras tu manoḥ putro go-pālo guruṇā kṛtaḥ pālayām āsa gā yatto rātryāṁ vīrāsana-vrataḥ

अर्थ: किन्तु मनु के पुत्र पृषध्र, जिन्हें उनके गुरु ने गोपालक बना दिया था, वीरासन-व्रत का पालन करते हुए हाथ में तलवार लिए रात्रि में सावधानीपूर्वक गौओं की रक्षा करते थे। (नवम स्कन्ध, अध्याय 2, श्लोक 3)



अपने वंश को आगे बढ़ाने हेतु पुत्र की कामना से वैवस्वत मनु यमुना के तट पर सौ वर्ष तक तपस्या करते हैं और भगवान् श्रीहरि की आराधना कर इक्ष्वाकु आदि दस पुत्र प्राप्त करते हैं (श्लोक 1-2)।

वह दुःखद रात

एक वर्षा भरी रात में एक बाघ गोशाला में घुस आया। विश्राम करती गौएँ भय से उठ खड़ी हुई और इधर-उधर भागने लगीं, और उस बलवान् पशु ने उनमें से एक को पकड़ लिया। उस पीड़ित गौ की चीख सुनकर पृषध्र तलवार खींचकर उसकी रक्षा के लिए दौड़े। किन्तु बादलों ने तारों को ढक लिया था, और उस घोर अन्धकार में उन्होंने भयभीत भूरी गौ को ही बाघ समझ लिया और एक ही तीव्र प्रहार से उसका सिर काट डाला। बाघ — तलवार की धार से घायल और एक कान कटा हुआ — रक्त बहाता हुआ रात में भाग निकला। प्रातःकाल जब पृषध्र ने देखा कि जिस गौ को वे बचाना चाहते थे उसी को उन्होंने मार डाला, तो वे शोक से अभिभूत हो गए।

एकां जग्राह बलवान् सा चुक्रोश भयातुरा ।
तस्यास्तु क्रन्दितं श्रुत्वा पृषध्रोऽनुससार ह ॥ ५ ॥
खड्गमादाय तरसा प्रलीनोऽगुगणे निशि ।
अजानन्नच्छिनोद् बभ्रोः शिरः शार्दूलशङ्कया ॥ ६ ॥

ekāṁ jagrāha balavān sā cukrośa bhayāturā tasyās tu kranditaṁ śrutvā pṛṣadhro 'nusasāra ha khaḍgam ādāya tarasā pralīnoḍu-gaṇe niśi ajānann acchinod babhroḥ śiraḥ śārdūla-śaṅkayā

अर्थ: बलवान् बाघ ने एक गौ को पकड़ लिया, और वह भय से चीख उठी। उसकी चीख सुनकर पृषध्र तलवार लेकर उसके पीछे दौड़े; और रात्रि में, जब तारे छिप गए थे, उन्होंने अनजाने में ही उस भूरी गौ का सिर काट दिया, उसे बाघ समझकर। (नवम स्कन्ध, अध्याय 2, श्लोक 5-6)



एक अन्धकारमय, वर्षा भरी रात में बाघ गोशाला में घुसकर एक गौ को पकड़ लेता है; उसकी चीख सुनकर पृषध तलवार लिए दौड़ते हैं — पर तारारहित अन्धकार में एक दुःखद प्रहार गलत प्राणी पर पड़ जाता है (श्लोक 5-6)।

वह शाप जो वरदान बन गया

जब यह पाप प्रकट हुआ — गौ का वध, यद्यपि पूर्णतः अनजाने में — तो उनके कुल-गुरु वसिष्ठ ने उन्हें शाप दिया: इस कर्म के कारण वे अब क्षत्रिय नहीं रहेंगे, अपितु शूद्र की अवस्था को प्राप्त होंगे।

तं शशाप कुलाचार्यः कृतागसमकामतः ।

न क्षत्रबन्धुः शूद्रस्त्वं कर्मणा भवितामुना ॥ ९ ॥

taṁ śasāpa kulācāryaḥ kṛtāgasam akāmataḥ na kṣatra-bandhuḥ śūdras tvaṁ karmaṇā bhavitāmunā

अर्थ: कुल-गुरु ने उन्हें शाप दिया, यद्यपि यह अपराध उन्होंने अनजाने में किया था — “इस कर्म के कारण तुम क्षत्रिय नहीं रहोगे, अपितु शूद्र हो जाओगे।” (नवम स्कन्ध, अध्याय 2, श्लोक 9)

पृषध ने न तर्क किया, न विरोध। हाथ जोड़कर उन्होंने मौन भाव से वह शाप स्वीकार कर लिया, और उसी दिन से आजीवन ब्रह्मचर्य और कठोर संयम का जीवन अपना लिया — वह व्रत जो तपस्वियों को अत्यन्त प्रिय है। समस्त प्राणियों के प्रति मित्रवत् और समभाव रखते हुए, उन्होंने अपने सम्पूर्ण हृदय को अनन्य भक्ति द्वारा भगवान् वासुदेव में — जो सबके आत्मा, परम और निर्मल हैं — लगा दिया। आसक्ति और परिग्रह से रहित, इन्द्रियों को पूर्णतः वश में किए हुए, वे जो कुछ अनायास मिल जाता उसी पर निर्वाह करते और पूर्ण समता में पृथ्वी पर विचरते रहे, संसार को जड़, अन्धे और बहरे मनुष्य के समान प्रतीत होते हुए भी भीतर से ज्ञान द्वारा तृप्त।

वासुदेवे भगवति सर्वात्मनि परेऽमले ।

एकान्तित्वं गतो भक्त्या सर्वभूतसुहृत् समः ॥ ११ ॥

विमुक्तसङ्गः शान्तात्मा संयताक्षोऽपरिग्रहः ।

यदृच्छयोपपन्नेन कल्पयन् वृत्तिमात्मनः ॥ १२ ॥

आत्मन्यात्मानमाधाय ज्ञानतृप्तः समाहितः ।

विचचार महीमेतां जडान्धबधिराकृतिः ॥ १३ ॥

vāsudeve bhagavati sarvātmani pare 'male ekāntitvaṁ gato bhaktyā sarva-bhūta-suhṛt samah vimukta-saṅgaḥ śāntātmā saṁyatākṣo 'parigrahaḥ yad-ṛcchayopapannena kalpayan vṛttim ātmanaḥ ātmany ātmānam ādhāya jñāna-tṛptaḥ samāhitaḥ vicacāra mahīm etāṁ jaḍāndha-badhirākṛtiḥ

अर्थ: एकाग्र भक्ति के साथ उन्होंने सर्वात्मा, परम एवं निर्मल भगवान् वासुदेव की शरण ग्रहण की, समस्त प्राणियों के प्रति सम और मैत्रीपूर्ण बने रहकर। संग-रहित, शान्त-चित्त, संयत-इन्द्रिय, अपरिग्रही, यदृच्छा से प्राप्त वस्तु मात्र से निर्वाह करते हुए, आत्मा में आत्मा को स्थिर कर ज्ञान से तृप्त और समाहित होकर, वे जड़, अन्धे और बधिर के सदृश इस पृथ्वी पर विचरते रहे। (नवम स्कन्ध, अध्याय 2, श्लोक 11-13)

अन्ततः इसी प्रकार जीवन बिताते हुए वे एक वन में गए और, वहाँ प्रज्वलित एक दावानल देखकर, उन्होंने अपना शरीर उन ज्वालाओं को अर्पित कर दिया — और इस प्रकार वह मुनि परम ब्रह्म को प्राप्त हो गए।

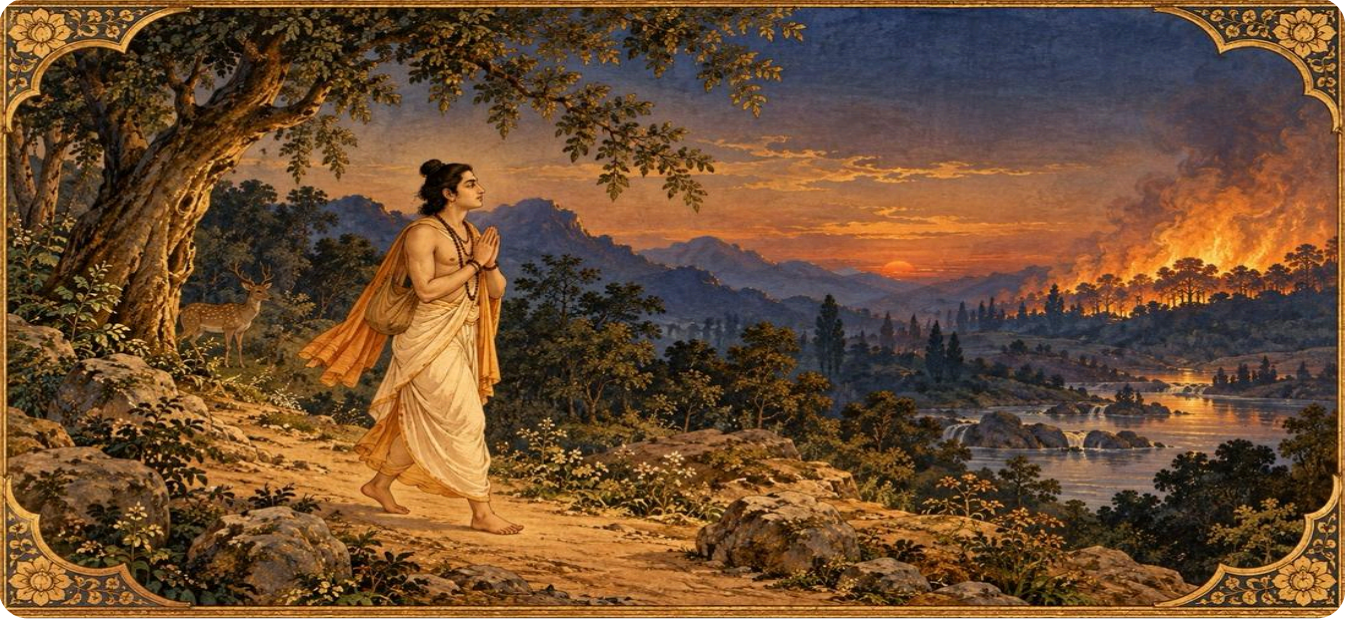
एवं वृत्तो वनं गत्वा दृष्ट्वा दावाग्निमुत्थितम् ।

तेनोपयुक्तकरणो ब्रह्म प्राप परं मुनिः ॥ १४ ॥

evaṁ vṛtto vanaṁ gatvā dṛṣṭvā dāvāgnim utthitam tenopayukta-karaṇo brahma prāpa paraṁ muniḥ

अर्थ: इस प्रकार जीवन बिताते हुए वे वन में गए और, वहाँ उठी हुई दावाग्नि देखकर, उसमें अपना शरीर अर्पित कर दिया; और वह मुनि परम ब्रह्म को प्राप्त हो गए। (नवम स्कन्ध, अध्याय 2, श्लोक 14)

इसी में इस अध्याय की सबसे गहन शिक्षा निहित है। वसिष्ठ का शाप अस्पष्ट नहीं था — उसने पृषध के अगले जन्म को शूद्र के रूप में निश्चित कर दिया था, कर्म का एक स्पष्ट और उच्चारित विधान। किन्तु जिस क्षण उन्होंने अपना सम्पूर्ण हृदय अखण्ड भक्ति द्वारा वासुदेव की ओर मोड़ दिया (श्लोक 11-13), वह विधान चुपचाप हट गया: अन्ततः जब उन्होंने वन की अग्नि में अपना शरीर अर्पित किया, तो वे किसी निम्न योनि में नहीं गए, अपितु “परम ब्रह्म को प्राप्त” हुए (श्लोक 14)। पृषध की इस कथा से एक भक्त को यही सीखना है — भक्ति भूतकाल के कर्म-फल को केवल मृदु ही नहीं करती, वह उसके किसी निश्चित, नामित विधान को भी निरस्त कर सकती है। न कोई प्रार्थना, न कोई तप और न कोई चतुर तर्क उन्हें वसिष्ठ के वचन से मुक्त कर सका; केवल भगवान् के प्रति समर्पण ने ही किया।



अपने गुरु के शाप को मौन भाव से स्वीकार कर पृषध्व भगवान् वासुदेव में पूर्णतः लीन एक विचरणशील तपस्वी बन जाते हैं, और अन्ततः भगवान् में लीन होकर अपना शरीर दावाग्नि को अर्पित करते हैं और परम गति प्राप्त करते हैं (श्लोक 11-14)।

कवि का युवावस्था में वैराग्य

मनु के पुत्रों में सबसे छोटे कवि विषय-भोगों के प्रति पूर्णतः निःस्पृह थे। किशोरावस्था में ही उन्होंने अपने बन्धुओं सहित राज्य का त्याग कर दिया, स्वयंप्रकाश परम पुरुष को अपने हृदय में स्थापित किया, वन में प्रवेश किया, और परम तत्त्व को प्राप्त हो गए।

कविः कनीयान् विषयेषु निःस्पृहो
 विसृज्य राज्यं सह बन्धुभिर्वनम् ।
 निवेश्य चित्ते पुरुषं स्वरोचिषं
 विवेश कैशोरवयाः परं गतः ॥ १५ ॥

*kaviḥ kanīyān viṣayeṣu niḥspṛho viśṛjya rājyaṁ saha bandhubhir vanam niveśya citte puruṣaṁ
 sva-rociṣaṁ viveśa kaiśora-vayāḥ paraṁ gataḥ*

अर्थ: सबसे छोटे कवि, विषयों के प्रति समस्त स्पृहा से रहित, किशोरावस्था में ही अपने बन्धुओं सहित राज्य का त्याग कर, स्वयंप्रकाश परम पुरुष को हृदय में स्थापित कर, वन में प्रवेश कर परम तत्त्व को प्राप्त हो गए। (नवम स्कन्ध, अध्याय 2, श्लोक 15)

करुषक, धृष्ट और नरिष्यन्त की वंश-परम्पराएँ

तत्पश्चात् शुक्रदेवजी मनु के शेष पुत्रों से उत्पन्न कुलों का वर्णन करते हैं। करुषक से करुष नामक क्षत्रिय उत्पन्न हुए — जो ब्राह्मणों के भक्त और धर्म के प्रेमी थे — और जो उत्तर दिशा के रक्षक बने।

करुषोन्मानवादासन् कारुषोः क्षत्रजातयः ।

उत्तरापथगोप्तारो ब्रह्मण्या धर्मवत्सलाः ॥ १६ ॥

karūṣān mānavād āsan kārūṣāḥ kṣatra-jātayaḥ uttarā-patha-goptāro brahmaṇyā dharma-vatsalāḥ

अर्थ: मनु के पुत्र करुषक से एक क्षत्रिय-वंश चला, जो धर्मपरायण और ब्राह्मणों के प्रति उदार था तथा उत्तर के प्रदेशों की रखवाली और शासन करता था। (नवम स्कन्ध, अध्याय 2, श्लोक 16)

धृष्ट से धार्ष्ट नामक कुल उत्पन्न हुआ, जो — क्षत्रिय होकर भी — इसी जीवन में ब्राह्मणत्व को प्राप्त हुआ। नृग से सुमति, भूतज्योति और वसु होते हुए प्रतीक, ओघवान् और ओघवान् की पुत्री ओघवती तक की परम्परा चली, जिसका विवाह सुदर्शन से हुआ। नरिष्यन्त की परम्परा चित्रसेन, ऋक्ष, मीढ्वान्, पूर्ण, इन्द्रसेन, वीतिहोत्र, सत्यश्रवा, उरुश्रवा और देवदत्त तक चली। देवदत्त से अग्निवेश्य उत्पन्न हुए, जो साक्षात् अग्निदेव ही थे, और आगे कनीन अथवा जातूकर्ण्य नामक ऋषि के रूप में प्रसिद्ध हुए; उन्हीं से अग्निवेश्यायन नामक ब्राह्मण-वंश उत्पन्न हुआ।

सम्राट् मरुत्त और दिष्ट की परम्परा

दिष्ट की परम्परा की ओर मुड़ते हुए शुक्रदेवजी नाभाग का नाम लेते हैं — जो अपने कर्मों (कृषि आदि) के कारण वैश्य की श्रेणी में आ गए — और उनके पश्चात् भलन्दन, वत्सप्रीति, प्रांशु, प्रमति, खनित्र, चाक्षुष, विविंशति, रम्भ और धर्मात्मा खनिनेत्र होते हुए करन्धम और उनके पुत्र अविक्षित तक। अविक्षित के पुत्र मरुत्त एक महान् सम्राट् हुए, जिनके महायज्ञ में अंगिरा-पुत्र प्रसिद्ध योगी संवर्त ने सहायता की। मरुत्त के समान यज्ञ आज तक किसी ने नहीं किया: उसमें जो कुछ भी सुन्दर था, सब शुद्ध स्वर्ण का बना था।

मरुत्तस्य यथा यज्ञो न तथान्योऽस्ति कश्चन ।

सर्वं हिरण्मयं त्वासीद् यत् किञ्चिच्चास्य शोभनम् ॥ २७ ॥

maruttasya yathā yajño na tathānyo 'sti kaścana sarvaṁ hiraṇmayam tv āsīd yat kiñcic cāsyā śobhanam

अर्थ: मरुत्त के समान यज्ञ अन्य किसी का भी कभी नहीं हुआ; उसमें जो कुछ भी सुन्दर था, वह सब स्वर्ण का बना था। (नवम स्कन्ध, अध्याय 2, श्लोक 27)

वह यज्ञ इतना गौरवमय था कि स्वयं इन्द्र उसके सोम से उन्मत्त हो गए, ब्राह्मण उदार दक्षिणाओं से पूर्णतः तृप्त हुए, उनचास मरुद्गण भोजन परोसते रहे, और विश्वेदेव सभासद बने।

अमाद्यदिन्द्रः सोमेन दक्षिणाभिर्द्विजातयः ।

मरुतः परिवेष्टारो विश्वेदेवाः सभासदः ॥ २८ ॥

amādyad indraḥ somena dakṣiṇābhir dvijātayaḥ marutaḥ pariveṣṭāro viśvedevāḥ sabhā-sadaḥ

अर्थ: इन्द्र सोम से उन्मत्त हुए; ब्राह्मण दक्षिणाओं से तृप्त हुए। मरुद्गण भोजन परोसने वाले बने, और विश्वेदेव सभा के सदस्य थे। (नवम स्कन्ध, अध्याय 2, श्लोक 28)



सम्राट् मरुत्त अब तक का सबसे भव्य यज्ञ करते हैं — जिसका प्रत्येक पात्र स्वर्ण का बना है, जहाँ इन्द्र उपस्थित हैं, मरुद्गण भोज परोस रहे हैं और विश्वेदेव सभा में विराजमान हैं (श्लोक 27-28)।

तृणबिन्दु का वंश और वैशाली नगरी

मरुत्त से यह परम्परा दम, राज्यवर्धन, सुधृति, नर, केवल, धुन्धुमान्, वेगवान् और बुध होते हुए प्रसिद्ध राजा तृणबिन्दु तक चली। वे इतने उत्तम गुणों से सम्पन्न थे कि अप्सराओं में श्रेष्ठ अलम्बुषा ने उन्हें अपने पति रूप में वरण किया; उनके संयोग से कई पुत्र और एक पुत्री इडविडा उत्पन्न हुई। इडविडा के माध्यम से ऋषि विश्रवा ने — अपने पिता ऋषि पुलस्त्य से परम ज्ञान प्राप्त कर — धन के अधिपति देव कुबेर को जन्म दिया। तृणबिन्दु के पुत्रों में विशाल, शून्यबन्धु और धूम्रकेतु थे; और विशाल ने, जो वंश के प्रवर्तक थे, प्रसिद्ध वैशाली नगरी का निर्माण किया।

विशालः शून्यबन्धुश्च धूम्रकेतुश्च तत्सुताः ।

विशालो वंशकृद् राजा वैशालीं निर्ममे पुरीम् ॥ ३३ ॥

visālah śūnyabandhuś ca dhūmraketuś ca tat-sutāḥ visālo vaṁśa-kṛd rājā vaiśālīm nirmame purīm

अर्थ: विशाल, शून्यबन्धु और धूम्रकेतु उनके पुत्र थे। वंश के प्रवर्तक राजा विशाल ने वैशाली नगरी का निर्माण किया। (नवम स्कन्ध, अध्याय 2, श्लोक 33)

विशाल का वंश हेमचन्द्र, धूम्राक्ष, संयम, कृशाश्व — अपने भाई देवज सहित — और सोमदत्त होते हुए आगे बढ़ा, जिन्होंने अनेक अश्वमेध यज्ञों द्वारा परम भगवान् की आराधना की और पूर्णतः उन्हीं पर आश्रित होकर परम गति प्राप्त की। सोमदत्त से सुमति और सुमति के पुत्र जनमेजय हुए। ये विशाल के वंश में उत्पन्न वे राजा थे, जिन्होंने अन्त तक अपने पूर्वज तृणबिन्दु की कीर्ति की रक्षा की।



वंश के प्रवर्तक और श्रेष्ठ तृणबिन्दु के वंशज राजा विशाल प्रसिद्ध वैशाली नगरी की स्थापना करते हैं, जिसके राजा दीर्घकाल तक अपने कुल की कीर्ति की रक्षा करते रहे (श्लोक

33)।

इस अध्याय के प्रमुख उपदेश

1. अनजाने में किया गया अपराध भी परिणाम लाता है — किन्तु भक्ति उसे लौघ जाती है। पृषध्र गौ का वध पूर्णतः अनजाने में करते हैं, फिर भी कर्म का विधान उन पर आ पड़ता है। परन्तु अपने भाग्य से टूटने के बजाय, वे उसे ईश्वर-साक्षात्कार का द्वार बना लेते हैं (श्लोक 5-14)।
2. आत्म-रक्षा से बड़ा है विनम्र स्वीकार। शापित होने पर पृषध्र कोई विरोध नहीं करते; हाथ जोड़कर मौन भाव से गुरु का वचन स्वीकार करते हैं और पूर्णतः भगवान् की ओर मुड़ जाते हैं। उनकी विनम्रता ही उनकी मुक्ति का बीज है (श्लोक 9-11)।
3. वैराग्य किसी भी अवस्था में खिल सकता है। युवक कवि संसार के अपने ऊपर पकड़ जमाने से पूर्व ही राज्य का त्याग कर देते हैं, यह दर्शाते हुए कि वैराग्य वृद्धावस्था का फल नहीं, अपितु परम पुरुष में स्थिर हृदय का फल है (श्लोक 15)।
4. सबसे बड़ा सांसारिक वैभव भी भगवान् में ही अपना मूल्य पाता है। मरुत्त का अतुलनीय स्वर्णमय यज्ञ और सोमदत्त के अश्वमेध केवल अपनी समृद्धि के लिए नहीं, अपितु इसलिए स्मरणीय हैं कि वे परम भगवान् को अर्पित थे, जिनके द्वारा वे अपने सच्चे फल को प्राप्त हुए (श्लोक 27-28, 35)।
5. वंश स्मृति की एक शृंखला है। नामों की यह लम्बी सूची स्वयं एक भक्तिमय कर्म है — यह स्मरण कराती हुई कि प्रत्येक पीढ़ी एक कड़ी है जो वर्तमान को मनु से, और मनु के द्वारा उस भगवान् से जोड़ती है, जिनसे समस्त वंश प्रवाहित होते हैं (श्लोक 16-36)।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

पृषध्र की कथा वंशावलियों के धुँधले पड़ जाने के बहुत बाद तक हृदय में बसी रहती है। यहाँ एक राजकुमार है जो सब कुछ ठीक करता है — कठोर व्रत का पालन करता है, तूफान में भी पहरा देता है, एक असहाय प्राणी को बचाने दौड़ता है — और अन्धकार के एक क्षण में, बिना किसी दुर्भावना के, अपने ऊपर विपत्ति ले आता है। कितनी सहजता से उसका जीवन कड़वाहट में बदल सकता था: मैंने तो केवल भला ही

चाहा; फिर मैं क्यों भुगतूँ? इसके बजाय वह सिर झुकाता है, जो आया उसे स्वीकार करता है, और अपने शेष दिन चुपचाप भगवान् को अर्पित कर देता है। जिस शाप ने उसके जन्म को नीचा किया, वह उसकी आत्मा को नीचा न कर सका; पद और परिग्रह से रहित होकर वह इस अध्याय के किसी भी राजा से अधिक स्वतन्त्र हो जाता है। इसमें हमारे लिए गहन सान्त्वना है। हमारे अपने उलटफेर शायद इतने नाटकीय न हों, पर ढाँचा वही है: कुछ ऐसा बिगड़ जाता है जो हमने चाहा न था, और हम आकाश की ओर अपनी निर्दोषता की दुहाई देना चाहते हैं। पृषध्र एक और मार्ग दिखाते हैं — अनुचित कष्ट को भी इस निमन्त्रण रूप में लेना कि हम भगवान् के अतिरिक्त सब कुछ छोड़ दें, और उस त्याग में वह शान्ति पा लें जिसे संसार न दे सकता है, न छीन सकता है।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज उस एक स्थिति का स्मरण करें जिसमें आप पर दोष लगा, या आपको हानि हुई, किसी ऐसी बात के लिए जो वास्तव में आपकी भूल नहीं थी। अपना बचाव करने की, अपनी निर्दोषता दोहराने की इच्छा को अनुभव करें। कुछ शान्त क्षणों के लिए उस इच्छा को वैसे ही रख दें जैसे पृषध्र ने अपनी तलवार रख दी थी, और उसके स्थान पर अपना हृदय भगवान् की ओर मोड़ दें, धीरे-धीरे दोहराते हुए: “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।” सही सिद्ध होने की नहीं, अपितु इसी कठिनाई के द्वारा उनके और निकट खिंच जाने की प्रार्थना करें — जैसे पृषध्र अन्धकार में एक गोशाला से खिंचते-खिंचते परम गति तक जा पहुँचे।

उपसंहार

नवम स्कन्ध का यह द्वितीय अध्याय पहली दृष्टि में नामों का अभिलेख-सा दिख सकता है, किन्तु इसकी सबसे गहन शिक्षा पृषध्र की कथा में है — कि भगवान् वासुदेव के प्रति अनन्य भक्ति कर्म के किसी विशिष्ट, उच्चारित विधान को भी निरस्त कर सकती है, और आत्मा को जन्म-मृत्यु के परे सीधे भगवान् तक पहुँचा सकती है। कवि का निर्भय वैराग्य, मरुत का स्वर्णमय यज्ञ और तृणबिन्दु का विशाल वंश — सब अपनी-अपनी भाषा में इसी सत्य की पुष्टि करते हैं: पद, धन और यहाँ तक कि शाप भी उस स्थान से कम महत्त्वपूर्ण हैं जहाँ हृदय टिका है। शुकदेवजी इन जीवनों को परीक्षित के — और हमारे — सामने एक ही निमन्त्रण के रूप में रखते हैं: जीवन को उस भगवान् से उसकी निकटता से मापें, जिनसे यह सम्पूर्ण महान् वंश अवतरित हुआ है।

श्रीमद्भागवत का यह दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जागृत करे।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ एवं आभार

- मुख्य संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, सम्पूर्ण), नवम स्कन्ध, द्वितीय अध्याय, पृष्ठ 5–7।
- शृंखला: श्रीमद्भागवत विज़्डम • बिस्वा सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन एवं अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, श्रद्धापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी एवं लिप्यन्तरण सहित दिए गए हैं और उनके अर्थ सारांश रूप में प्रस्तुत हैं। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद या टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी प्रकाशक के साथ किसी सम्बद्धता या उसके अनुमोदन का दावा नहीं किया गया है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-9-chapter-2-the-posterity-of-the-sons-of-manu-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम · कल्कि अवतार इंटरनेशनल · बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट

